Research Paper

Volume : 3 | Issue : 12 | December 2014 • ISSN No 2277 - 8179

समुदाय आधारित कृषि भूमि संसाधन प्रबन्धन की परम्परागत पद्धति एव चिरन्तर विकास की सम्भावनाऐ: चमोली जनपद, उत्तराखण्ड

Geography

KEYWORDS :

Rajendra Prasad Tiwari — Department of Geography, HNB Garwal Central University, Srinagar Garhwal, Uttarakhand

M.K. Parmar — Department of Rural Technology, HNB Garwal Central University, Srinagar Garhwal, Uttarakhand

ABSTRACT

प्राकृतिक संसाधन वह प्रकिया है, जिसके तहत भौगोलिक वातावरण में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों जैसे कि भूमि जल मृदा पेड़ पोधों तथा जन्तुओं का वैज्ञानिक तरीके से प्रबन्धन किया जाता है। प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन साथ ही साथ समुचित विकास का समरूप है। जिसके तहत वैज्ञानिक सिद्धान्तों समुचित वैश्विक भूमि प्रबन्धन तथा पर्यावरणीय नियन्त्रण को परिलक्षित कर वैज्ञानिक एवं तकनीक जानकारियों के साथ पारिस्थितिक तथा जीवनदायी संसाधनों की परख की जाती है। किसी भी अर्थव्यवस्था में भूमि का कितना महत्व है, इसे संसार के मानव मात्र जानते है। धरती ही प्राणी मात्र को जीवित रहने के लिये भोजन तथा आश्रय देती है। भूमि को कृषि तथा अन्य आर्थिक कार्यकलापों के लिये मानव द्वारा सर्वाधक प्रयोग में लाया जाता है। जनसंख्या बढ़ने पर भूमि की मांग की पूर्ति हेतु इसे बढ़ाना सम्भव नही हो पाता है।

भौगोलिक पृश्ठभूमि :–

चमोली जिला उत्तराखण्ड के उत्तर पूर्वी भाग में स्थित है। चमोली जिला 29⁰ 55′ से 31⁰–03′ 45′′ और 79⁰–02′ 39′′ से और 80⁰–03′ 29′′ देषान्तरों के मध्य स्थित है। चमोली जिला उत्तराखण्ड का दूसरे नम्बर का सबसे बड़ा जिला है। इसकी उत्तरी सीमा पर तिब्बत स्थित है। उत्तरकाषी उत्तर पष्चिम से, पिथौरागढ़ दक्षिण पष्चिम से, अल्मोड़ा दक्षिण पूर्व से, रूद्रप्रयाग दक्षिण पष्चिम से और टिहरी ने पष्चिम से चमोली जिले को घेर रखा हैं। 2011 की जनसंख्या के आँकड़ों के अनुसार चमोली जनपद की जनसंख्या 3,91,114 है।

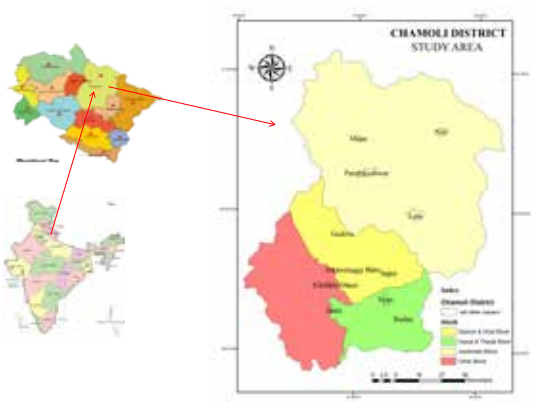

विधि तन्त्र :–

प्रस्तुत षोध पत्र में आँकड़ों का संकलन प्राथमिक व द्वितीय स्रोतों से किया गया है। द्वितीयक आँकड़ों का संकलन षोध पत्र, षोध ग्रन्थ, समाचार पत्र, सेंसेंक्स पत्रिका, सन्दर्भ ग्रन्थ सी0बी0एन0आर0एम0 दस्तावेज से किया गया।

प्राथमिक आंकड़ों का संकलनः–

देव निर्देषन विधि से एक गॉंव नदी के षीर्श से ओर एक गॉंव मध्य से ओर एक गॉंव नदी बेसिन के निचले भाग से चुनाव किया गया और प्रत्येक गॉंव से देव निर्देषन विधि से दस परिवारों का चुनाव किया गया। कुल 120 लोगों का साक्षात्कार लिया गया।

प्राथमिक आंकडों का संकलन प्रष्नावली अवलोकन फोकस ग्रुप डिस्कषन के माध्यम से किया गया।

उद्देष्य

1.कृशि भूमि ससाधनों की प्रबन्धन की परम्परागत पद्धतियॉं।

2.चिरन्तर कृशि एवं स्थानीय पर्यावरण के साथ परम्परागत कृशि पद्धति का सम्बन्ध।

सामुदाय आधारित भूमि संसाधन प्रबन्धन

प्राकृतिक संसाधनों में भूमि सबसे महत्वपूर्ण संसाधन है, क्योंकि इससे पैदा होने वाले उत्पादन से न केवल मानव अपितु पालतू पषुओं एवं जंगली पषु पक्षियों की जरूरतें भी पूरी होती है। भूमि केवल ऊपरी सतह पर दिखाई देने वाला तल ही नही है बल्कि इसके साथ वनस्पति मिट्टी भूमिगत जल तथा भूगर्भीय स्रोत भी उपलब्ध होते है। इसमें उपलब्ध जीवन वायु, सतही एवं भूमिगत जल तथा चट्टानों को षामिल कर भूमि संसाधन बनता है। जल, जंगल एवं जमीन की एकीकृत उपयोग एवं प्रबन्धन मानव जीवन के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

चमोली जनपद में भूमि संसाधन प्रबन्धन को मिट्टी की उर्वरता बनाये रखने के लिए फसल चक्र तथा सारी पद्धति का उपयोग किया जाता है।

भूमि प्रबन्धन के लिए सारी पद्धति

पर्वतीय ग्रामीण कृशकों द्वारा सम्पूर्ण असिचिंत कृशि भूमि को दो भागों में बांटा गया, इस विभाजन की पद्धति को सारी, एक भाग को सार कहा जाता है अर्थात गांव की कुल असिचिंत कृशित भूमि दो सारों में विभाजित है। सारी को चिन्हित करने के लिए ऊपरी भाग को स्थानीय लोग मल्ली सार तथा निचले भाग को तल्ली सार नामों से पुकारते है। वास्तव में सार का अभिप्राय है कि एक समय में एक भाग में एक प्रकार की फसल तथा उसी समय में दूसरे भाग में दूसरी प्रकार की फसल बोयी जाय ताकि एक वर्श में सभी प्रकार की फसलें पैदा की जा सके। सारी पद्धति के अन्तर्गत फसल चक्र इस प्रकार संचालित होता है।

चमोली जिले में सारी पद्धति अन्तर्गत फसल चक्र

माना कि गांव की कुल असिचिंत कृशि भूमि 'भ' है। सार पद्धति के अनुसार 'भ' को दो भागों (सारों) क तथा ख में विभाजित किया गया है। आवष्यक नही है कि भूमि का विभाजन बराबर हो अर्थात क और ख बराबर नहीं होते है। गांव की सुविधा या परम्परा के अनुसार दो भाग क तथा ख मान लिए गये हैं। इन दो सारों में फसल चक्र भिन्न–भिन्न होते है।

सार पद्धति के अनुसार असिचिंत क्षेत्रों के भाग क में जब धान बोया जाता है तब भाग ख में मंडुवा की फसल उगाई जाती है। भाग क में धान काटने के बाद पष्चात गेहूं बोया जाता है। जबकि भाग 'ख' को परती छोड़ा जाता है। भाग 'क' में गेहूं की फसल काटने के उपरान्त तुरन्त मंडुआ बोया जाता है। भाग 'ख' को परती छोड़ने के बाद फरवरी से धान बोने के लिए खेतों को तैयार करना प्रारम्भ कर दिया जाता है। धान अप्रैल–मई में बो दिया जाता है। भाग 'क' से मंडुवा कटने पर खेतों को परती छोड़ दिया जाता है। जबकि भाग 'ख' में धान की फसल कटने के उपरान्त गेहूं बोया जाता है। भाग क को परती छोड़ने की अवधि समाप्त होने पर बुआई की तैयारी करके धान बोया जाता है। भाग ख में गेहूं कटने के पष्चात मंडूवा की फसल बोई जाती है।

इस प्रकार दोनों भागों में फसल चक्र चलता रहता है। यदि एक भाग क को ही ध्यान में रखे तो ज्ञात होता है कि भाग 'क' से दो वर्शो में तीन फसलें धान गेहूं मंडुवा बोई जाती है और लगभग तीन चार माह तक भाग 'क' परती रहता है। भाग 'ख' भी इसी प्रकार उन्हीं दो वर्शों में तीन फसलें मंडुवा धान तथा गेहूं देता

है। मंडुवा कटने पर 'ख' भी परती छोड़ दिया जाता है। सारी पद्धति के अन्तर्गत फसलों को दो सारों में निरन्तर उत्पादन किया जाता है जिससे प्रतिवर्श कृशक को समस्त खाद्यान्न प्राप्त होते रहते है।

सार पद्धति के लाभ (ठमदमपिजे वि॑तिप ॑लेजमउ)

पर्वतीय क्षेत्र की सार पद्धति सर्वोत्तम प्रतीत होती है। जो पारिस्थितिकी तथा पर्यावरण के अनुकूल व आर्थिक दृश्टि से लाभकारी है। इस पद्धति के लाभ निम्न प्रकार है।

1– प्रतिवर्श प्रत्येक भाग सार परती रहता है जो लगभग तीन चार माह परती रहकर प्राकृतिक प्रक्रिया से अपने खोई हुई उर्वरा श्षक्ति पुनः प्राप्त करती है। जाड़ों के चार महिनों तक पषु खुले रूप से इस भूमि पर चरते रहते है। दिसम्बर से फरवरी तक वर्शा तथा हिमपात होता है। पाला या ओस गिरती है। इस प्राकृतिक प्रक्रिया द्वारा परती भूमि अपनी खोई हुई उर्वराश्षक्ति को पुनः प्राप्त करने में समर्थ हो जाती है।

2– भूमि मंडुवा की फसल के उपरान्त छोड़ी जाती है मंडुवा के साथ दालें तथा अन्य बेलवाली फसलें भी बोई जाती है। इससे प्राकृतिक नाइट्रोजन स्वांगीकरण हा. ेता है जो खेतों की उर्वरा षक्ति बढ़ाती है मडंवा की झंकड़ा जड़े सड़कर कार्बनिक खाद का काम करती है पाला, ओस, वर्शा आदि आर्द्रता को बनाये रखने के कारण प्राकृतिक प्रक्रिया में सहायक होती है। खेतों में हयूमस तथा नमी बनी रहती है।

3– कृशि भूमि को परती छोड़ने का दूसरा लाभ वर्शा ऋतु में भारी वर्शा के कारण खेतों की जो दीवारे टूट जाती है उनकी उचित मरम्मत करने के समय खाली खेत मिल जाते है। फसल वाले खेतों में दीवार बंदी समतलीकरण सफाई आदि कार्य समुचित ढंग से नहीं हो पाता है।

4– धान बुआई हेतु खाली खेतों में गोबर की खाद दी जाती है और तब पहली बार हल चलाया जाता है। कुछ समय के लिए खेत छोड़ दिये जाते है। आने वाली बरसात में सम्भावित हानि का अनुमान लगाकर खेतों को तैयार किया जाता है ताकि हानि की सम्भावना कम से कम रहे।

5– कृशकों को प्रतिवर्श सभी प्रकार के खाद्यान्न उपलब्ध हो जाते है। चमोली जनपद में प्रमुखतः धान, गेहूं तथा मंडुआ तीन फसलें होती है। इन्ही फसलों के अनुसार कृशि प्रक्रियाओं के अन्तर्गत मिट्टी तैयार की जाती है।

धान बुआई हेतु मृदा प्रक्रियाएं ॅ़वपस च्तवबमेपदह नदकमत च्ंककल ब्नसजपअं. जपवद)

पर्वतीय क्षेत्रों मे परती भूमि पर जाड़ों की वर्शा समाप्त होने तथा ठंड कम होने के पष्चात लगभग फरवरी के तीसरे सप्ताह विषेशकर बसंत पंचमी के दिन से प्रथम हल चलाने का दिन प्रारम्भ होता है। ऊंचाई तथा घाटी में प्रथम हल का समय पारिस्थितिकी के अनुसार आगे पीछे होता है। इस दिन से पर्वतीय कृशक अपने हल तथा खेती के पुराने औजारों की मरम्मत खानदानी लोहार से कराना प्रारम्भ कर देता है।

खेतों को तैयार करने की प्रक्रिया परती रखे गये खेतों में गोबर की खाद डालने से प्रारम्भ होती है। हल चलाने के पष्चात खेतों की खर–पतवार झाड़ियां कांटे आदि काटकर खेत के किनारों पर इकटठा कर दिये जाते है। कुछ दिनों तक खेतों को प्राकृतिक प्रक्रिया के लिए छोड़ दिया जाता है। खेत के कंकड़ पत्थरों को निकालकर खेतों की मेढ़ों पर लगा दिया जाता है। टूटी हुई दीवारों की मरम्मत की जाती है। एकत्रित किये गये खरपतवार कांटे आदि सूखने पर जला दिये जाते है। जिन खेतों के धान बोया जाता है, उनमें दुबारा हल चलाया जाता है। मिट्टी के ढेलों को लकड़ी के छप्पा से तोड़ा जाता है। इसके उपरान्त जोल बैलों से चलाया जाता है ताकि मिटटी पतली तथा समान हो जाए। तत्पष्चात कुदाल से मंडुवे की जड़े तथा अन्य खर–पतवार निकाला जाता है।

धान छिटकवां तरीके से बोने के बाद बारीक हल चलाया जाता है। लकड़ी के छप्पा से पुनः मिट्टी के ढेले तोड़कर हल से बनी मेडों को समतल किया जाता है। कहीं–कहीं गांवों में जोत चलाकर छोड दिया जाता है। कुछ गांवों में कुदाल से मिट्टी को समान तथा समतल किया जाता है। छप्पा तथा जोत उन खेतों में आवष्यक होता है, जिनमें मिटटी कठोर तथा हल चलाने पर कड़े ढेले निकलते है। अधिकतर चुपड़ी मिट्टी के खेतों में ऐसा होता है।

धान की पौध जब 6–10 इंच ऊंची हो जाती है तब गुड़ाई की जाती है। कतिपय गांवों में पहले लकड़ी का दन्याला बैलों से ही चलाया जाता है दूसरी बार गुड़ाई जून जुलाई मे की जाती है। बरसात में धान के खेतों में निराई की जाती है, उल्लेखनीय है कि बुआई, गुडाई तथा निराई का समय समुद्रतल से ऊंचाई तथा स्थानीय जलवायु पर निर्भर करता है। धान की फसल पर एक नियम लागू होता है। ऊंचाई अधिक तो पहले बुआई तथा पहले फसल कटाई एवं ऊंचाई कम तो देर से बुआई तथा देर से फसल कटाई। सामान्यतः यह नियम उन सभी फसलों पर लागू हो जाती है जो धान की फसल के साथ बोये जाते है। उंचाई वाले क्षेत्रों में धान की कटाई सितम्बर मे प्रारम्भ हो जाती है। जबकि घाटियों मे अक. टूबर के अन्त अथवा आधे नवम्बर तक समाप्त होती है। धान की फसल के साथ कहीं–कहीं काले भूरे रंग की तिल भी बोई जाती है, इस तिल को स्थानीय भाशा में सटीक तिल या सट्याड़ी तिल कहते है।

मोटे अथवा निम्न श्रेणी की फसलों जैसे झंगोरा व कौणी की बुआई के लिए केवल दो बार हल चलाया जाता है। कंकड़ पत्थर हटाकर टूटी दिवारों की मरम्मत की जाती है इन फसलों के लिए विषेशकर दोमट किस्म की मिट्टी वाले खेत होते है। इनको भी हाथ से छिड़क कर बोया जाता है। झंगोरा की फसल के साथ खेत के उपरी भाग कनाली तथा निचले भाग डिपाले में कौणी बोई जाती है। सिंचित क्षेत्रों में अब मंडुवा बोने लगे है।

झंगोरे की फसल में प्रथम बार गुड़ाई करने के बाद बरसात आरम्भ होने पर जुलाई मे लगभग एक फीट की दूरी पर हल चलाई जाती है जिसे स्थानीय भाशा मे हलचीरा कहते है। हल पर रिंगाल या किसी मोटी बेल को लपेटा जाता है ताकि हल के दोनों ओर की मिट्टी आसपास की फसल को दबाती रहे तथा हल से बनी हुयी नाली ज्यों की त्यों बनी रहे। हल कंटूर लाइन समोच्च रेखा में चलाया जाता है। जिसे कंटूर लाइन जुटाई की कहते है। इससे खरपतवार, मिट्टी से दबकर सड़ जाती है। झंगोरे की फसल में हलचौरा देने से दो मुख्य लाभ होते है। पहला कंटूर प्लोइंग समोच्च जुताई से खेते में नालियां बन जाती है। उनसे मिट्टी से खरपतवार गुड़ाई के बाद खेत के किनारे पर अथवा खाली स्थानों पर जमा कर दी जाती है। जो सड़कर खाद बन जाती है। दूसरा खेत मेड़ों पर खरपतवार रखने से पानी के बहाव में रूकावट आने के कारण मृदा क्षरण में कमी आती है। कौंणी की फसल सबसे पहले पकती है। यह मोटा अनाज पोश्टिक आहार है।

2– गेहूं बुआई हेतु मृदा प्रक्रियाऐं ॅ़वपस च्तवबमेपदह न्दकमत ॅीमंज ब्नसजपअं. जपवद)

रबी की मुख्य फसलें गेहूं तथा जौ है। धान, झंगोरा तथा कौणी की फसलें कटने के उपरान्त तुरन्त गेहूं की बुआई की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। पहली जुताई मोटे व चौड़े हल से की जाती है। ताकि खरपतवार, पिछले फसलों की जड़ें आदि मिट्टी से दब जाय। जुताई के पष्चात पाटा जोत करके लगभग एक माह तक पषुओं को चरने के लिए खेतों को खुला छोड़ दिया जाता है। ताकि खरपतवार, फसलों की जड़े, छूटे हुए तने घास आदि प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा सड़कर खाद का रूप ले लें। गेहूं की बुवाई हाथ से छिड़क कर की जाती है। गेहूं छिड़कने के उपरान्त महीन जुताई की जाती है। कम नमी वाले खेतों में पाटा फेरा जाता है। ताकि खेत की नमी बनी रहे और गेहूं का बीज समय पर जम जाए। बुआई के समय वर्शा तथा नमी का ध्यान अवष्य रखा जाता है।

गेहूं की बुवाई का समय स्थान भी समुद्रतल से ऊंचाई, पर्यावरण तथा जलवायु पर निर्भर करता है। स्थान की ऊंचाई यदि अधिक हो तो गेहूं बुबाई समय से पहले तथा ऊंचाई कम हो तो बुवाई देर में होती है। सामान्यतया अक्टूबर नवम्बर में गेहूं की फसल बोई जाती है। वर्शा पोशित क्षेत्रों में 99 प्रतिषत लाल किस्म का गेहूं बोया जाता है। जंगली पषु इस फसल को कम नुकसान पहुंचाते है। सामान्यतया फसल पकने तथा कटने का समय अप्रैल मई है। फसल पकने का समय भू भागीय जलवायु, समुद्रतल से ऊंचाई तथा घाटियों पर निर्भर करता है।

मंडुआ बुबाई हेतु मृदा प्रक्रियाऐं ॅ़वपस च्तवबमेपदह न्दकमत डंदकनं ब्नसजपअं. जपवद)

गेहूं की फसल कटने के तुरन्त पष्चात मंडुवा की बुवाई प्रारम्भ हो जाती है। बेलद. ार फसलों को मिश्रित खेती के रूप में बोने का ढंग इस प्रकार होता है। सबसे पहले खेतों में भट्ट, उड़द, गहद आदि बोया जाता है। खेतों की मेड़ों पर सोंठा लोबिया बोया जाता है और तब जुताई की जाती है। जुते हुए खेत में मंडुवा या चुवा रामदाना छिड़का जाता है तत्पष्चात कंटीली झाड़ी का झेटा बनाकर खेत में घसीटा जाता है। ताकि बीज मिट्टी में मिल जाए। कही–कहीं छेंटा के बजाय पाटा जोत फेंरा जाता है। बेलदार फसलों के बीज पहले बोये जाते है। ताकि वे बीज गहराई में जाकर अंकुरित होने के लिए अधिक नमी पाकर समय पर जम जाय।

मंडुवा की पौध जब 10–15 सेंटीमीटर के लगभग बड़ी जो जाती है तब बैलों से दन्याला चलाया जाता है। कुछ क्षेत्रों में कुदाल से पहले मोटी खरपतवार तथा गेहूं के तने खेतों के किनारे अथवा खाली स्थानों पर जमा कर दिया जाता है। यह प्रक्रिया जून के अन्तिम सप्ताह अथवा जुलाई के प्रथम सप्ताह में होती है। जब वर्शा प्रारम्भिक सोपान में होती है। ये प्रक्रिया फसल की वृद्धि पर निर्भर करती है। जुलाई के अन्तिम सप्ताह तक फसल की उंचाई 15 से 20 सेमी होने पर हलचीरा दिया जाता है। फसल तथा खरपतवार मिटटी से दबाई जाती है। लगभग

Volume : 3 | Issue : 12 | December 2014 • ISSN No 2277 - 8179

20–25 दिन के पष्चात गुड़ाई की जाती है। खाली स्थानों पर पौध की रोपाई की जाती है। गर्म स्थानों में उड़द की फसल हलचीरा देते समय बोई जाती है। ऊंच. ाई तथा कुछ ठंडे भागों में उड़द की बोवाई पहले की जाती है।

गोठ और छान :–
कृशि भूमि प्रबन्धन के लिए, जहां पर मनुश्य मूल रूप से रहते हैं उससे कुछ दूरी पर गोंठ और छान का निर्माण किया जाता है। गोंठ या छान में पालतू जानवर रहते है।

वैज्ञानिक आधार :–
गोंठ हमेषा खेतों के निकट बनायी जाती है। जिससे खेतों तक गोबर पहुंचाने में समय व श्रम की बचत होती है। खेतों में गोबर दो तरह से डाला जाता है, बरसात के समय गोबर को पालतू जानवर के नीचे से निकाल कर सीधे सोल्टो या कन्डी से खेत में डाला जाता है ताकि छानि के आस–पास कीचड़ या गन्दगी न हो तथा दूसरा सर्दियों व गर्मियों के समय गोबर को गोठ के किनारे या आगे पर एकत्रित कर दिया जाता है। उसको गोलाकार रूप से एकत्रित करते है ताकि अन्दर भॉप बने तथा गोबर सड़कर बारीक हो जाए तब जब वह बारीक तथा उपजाऊ हो जाता है, उसे खेतों में सीधे डालते है तथा उसको पूरे खेत में मिट्टी के साथ मिश्रित कर देते है।

खरर्क –
जहां पर लोग वर्श भर रहते है वहां पर प्राकृतिक संसाधनों पर अधिक दबाव पडता है इस दबाव को कम करने के लिए लोगों ने बरसात के समय मौलिक स्थान से दूर के क्षेत्रों में अपने पषुओं को ले जाकर रहना षुरू किया। इस समय लोग अपने पषुओं के साथ जहां पर रहते है उस जगह को खर्क कहते हैं।
खर्क में रहने के अन्य फायदे –

यहां घास चारापत्ती आदि प्रचूर मात्रा मे मिलती है।
निम्न ऊंचाई पर जहां लोग वर्श भर रहते वहां बरसात के समय विषेशकर भादों व सावन के समय गाय बकरी आदि जानवरों को बगड़ों में गमजर लग जाता है तथा वे बीमार हो जाते है तथा बगड़ों की गर्मी सहन करने में वे असमर्थ रहते है उनमे खून सम्बन्धित बीमारी उत्पन्नं हो जाती है। इसलिए अधिक ऊंचाई पर खर्कों में जानवरों को ले जाते है। जहां उनका स्वास्थ्य सही रहता है।

वर्तमान में खर्क षब्द का प्रयोग जहां होता वहां पर पषुपालन व कृशि उससे जुड़ जाती है। जबकि प्रारम्भ में खर्क से पषुपालन का ही सम्बन्ध था तथा धीरे–धीरे लोगों ने खर्क के आस–पास सब्जियां उगानी षुरू की। लोग धीरे–धीरे खर्कों में कृशि की क्रिया को व्यापक रूप से करने लगे। जिसमें विषेशकर मोटे अनाज या व्यावसायिक फसलें जिसमें राजमा, आलू, उगल, फावर, आदि अनाजों का उत्पादन करते है तथा बकरियों व घोड़ों में लादकर अपने निचले आवास स्थान गांवों की ओर लाते है।

चैकडैम व सुरक्षा दीवार :–
भूमि प्रबन्धन के लिए तथा भूमि के कटाव को रोकने के लिए प्रारम्भ से ही ढाल वाले क्षेत्रों में पत्थरों की छोटी–छोटी दीवार लगायी जाती थी ताकि मृदा का अपरदन न हो तथा भूमि के कटाव भी कम हो। सभी गांवों में यह कार्य किया जाता है तथा वर्तमान में सरकारी ब्छछत्छ स्कीम जिसमें जवाहर लाल नेहरू योजना, मनरेगा की योजना या हरियाली योजना है। इन सभी योजनाओं के अन्तर्गत सुरक्षा दीवार चैकडैम तथा गैरवाड़ की जाती है। इसके साथ–साथ वृक्षारोपण भी किया जाता है, ताकि पेड़ अपने पत्तियों जड़ों आदि के माध्यम से मृदा अपरदन को नियन्त्रण में रखे।

मेड़ बॉधकर मिट्टी अपरदन को रोकना :– प्रतिदर्ष के सभी गांवों के लोग प्रारम्भ से ही अधिक ढलान वाले खेतों में तीन–या चार मेड़ बाध देते है। यह ऊपर से षुरू होता है ताकि ऊपर की जो मिट्टी बहे वह पहले मेंड़ में एक साथ तथा उस मेड़ के नीचे की मिट्टी बहे तो दूसरे मेड़ में रूक जाए तथा दूसरे मेड़ के नीचे की ऊपजाऊ मिट्टी को तीसरी मेंड़ रोक देती है। इस तरह ऊपजाऊ मिट्टी को बहने से रोकने के लिए अधिक ढाल वाली भूमि व खेतों में मेंड़ से बाधकर भूमि का प्रबन्धन किया जाता है।

REFERENCE

1. एन0 एस0 बिष्ट, कृषि पर्यावरण एवं पारिस्थितिकीय नियोजन (उत्तराखण्ड के परिपेक्ष्य में) षिवा आ्फसेट प्रेस, 14 ओल्ड कनाट प्लेस, देहरादून द्य 2. एन0 एल0 अग्रवालः भारतीय कृषि का अर्थतंत्र, 1983ः राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर द्य 3. जनगणना कार्य निदेशालय, उत्तराखण्ड द्य